Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN -PRINT-2231-3613ONLINE2455-8729
International Educational Journal
CHETANA
Impact Factor SJIF=4.157

Received on 9th July 2019, Revised on 11th July 2019; Accepted 19th July 2019

आलेख

तेरापंथ साहित्य के शैक्षिक तत्वों की राष्ट्रीय पाठ्चर्या प्रारुप 2005 के सन्दर्भ में विवेचना

* डॉ. बीना देवी जैन
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, सुबोध महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, सांगानेर जयपुर
ई.मेल–beena_sanjeev76@yahoo.co.in, मोबाइल नं. 9521604872

मुख्य शब्द - *शिक्षक–प्रशिक्षण, आधुनिकीकरण, द्विवर्षीय बी.एड. स्नातक उपाधि आदि।*

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 के पेज नं. 70 पर लिखा है कि शिक्षा सच्चे अर्थ में व्यक्तियों के अपने मूल्यों के स्पष्ट कर पाने में सहायक हो, उनको सजग निर्णय की दिशा में प्रेरित करे। हिंसा के स्थान पर शान्ति को चुनने के लिए प्रेरित करे। शान्ति के लिए शिक्षा नैतिक विकास के साथ उन मूल्यों दृष्टिकोंण और मानव जगत के बीच सामंजस्य बिठाने के लिए आवश्यक है जिसमें जीने का हर्ष, प्रेम, उम्मीद और साहस के आन्तरिक संसाधनों के साथ व्यक्तित्व का विकास शामिल है। इसमें मानव अधिकार, न्याय, सहिष्णुता, सामाजिक दायित्व सांस्कृतिक विविधता का सम्मान शामिल है। सामाजिक न्याय शान्ति शिक्षा का महत्वपूर्ण घटक है।

शिक्षा सार्थक तभी हो सकती है जब वह व्यक्ति को इतना समर्थ बनाये जिससे मानव शांति को जीवन शैली के रुप में चुन सके और संघर्ष को सुलझाने की क्षमता रख सकें। शिक्षा व्यवस्था समाज से अलग होकर कार्य नहीं करती जिसका वह भाग है अर्थात शिक्षा समाज के अनुरुप हो। भारत विविध संस्कृतियों वाला देश है जो अनेक प्रादेशिक व स्थानीय संस्कृतियों से मिलकर बना है। लोगों के धार्मिक विश्वास, जीवन शैली व सामाजिक सम्बन्धों की समझ एक दूसरे से बहुत अलग है सभी समुदायों को सहअस्तित्व और समान रुप से समृद्ध होने का अधिकार है और शिक्षा व्यवस्था भी हमारे देश में निहित सांस्कृतिक विविधता के अनुरुप होनी चाहिए। इसी प्रकार आधुनिक तेरापंथ साहित्य में भी इसी से मिलती–जुलती हुई शिक्षा की अवधारणा को स्पष्ट किया गया है कि शिक्षा वह प्रक्रिया है जो व्यक्ति का नैतिक विकास कर उसमें उच्च जीवन मूल्यों की उद्भावना उत्पन्न करती है। इसलिए आचार्य तुलसी ने भी शिक्षा को जीवन जीने और व्यक्तित्व विकास से जोडा गया है। शिक्षा समाज के अनुरुप होनी चाहिए। शिक्षा वह है जो धर्म, सहअस्तित्व, जागरुकता आदि जीवन मूल्यों के द्वारा जीवन का निर्माण करे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में शिक्षा के बारे में कहा गया है कि शिक्षा के मूल सरोकार निसन्देह आज भी महत्व रखते हे वे ये है कि बच्चों को इतना सक्षम बनाते है कि वे जीवन का उद्देश्य निश्चित करें और उसे प्राप्त करने का प्रयास करें। इसी बात को आधुनिक तेरापंथ साहित्य में कहा गया है कि शिक्षा वह है जिससे व्यक्ति को लक्ष्य का सही ज्ञान हो सके।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में लिखा है कि एक अशांत प्राकृतिक व सामाजिक वातावरण अक्सर मानव सम्बन्धों में तनाव लाता है जिससे असहिष्णुता व संघर्ष पैदा होता है, ऐसे में शिक्षा प्रायः यहां तक कि युवा मस्तिष्क को असहिष्णुता की संस्कृति का पाठ पढाकर घातक भूमिका निभाती है, जिससे मानवीय भावनाओं व विभिन्न सभ्यताओं द्वारा खोजे गये उदान्त सत्य नकारे जाते है । शान्ति की संस्कृति का निर्माण करना शिक्षा का निर्विवाद उद्देश्य है।

जैन तेरापंथ साहित्य में लिखा है कि शिक्षा का सही लक्ष्य अपने आपको सुसंस्कृत बनाना तथा शान्ति व सन्तुष्टि के सच्चे मार्ग को पाना है और उस पर चलने की योग्यता हासिल करना है। शिक्षा के लक्ष्य समाज की मौजूदा महत्वकाक्षाओं व जरुरतों के साथ शाश्वत मूल्यों तथा समाज के तात्कालिक संस्कारों सहित वृहद मानवीय आदर्शों को भी प्रतिबिम्बित करते है। इसी बात को तेरापंथ साहित्य में कहा गया है कि चित्त की निर्मलता, बौद्धिक विकास, संस्कारों का परिष्कार एवं विसंगतियों को दूर करना भी शिक्षा का

कार्य मानते थे। इस प्रकार हम देखते है कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 व आधुनिक तेरापंथ साहित्य में शिक्षा के अर्थ व उद्देश्य के बारे में बहुत कुछ समानता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में बताया गया है कि अध्यापकों की जिम्मेदारी है कि जो बच्चे स्वभाविक रुप से शिक्षा के प्रति उत्साहित नहीं लगते हैं उन्हें प्रोत्साहित करें। इसलिए शिक्षकों को विद्यार्थी की प्रतिभा और आत्मविश्वास के विकास में योगदान देना चाहिए। उन्हे धमकी भरी भाषा और प्रतिकूल शारीरिक भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए। शिक्षकों को उत्सावर्धक, सहायोगी और मानवीय होना चाहिए जिससे विद्यार्थी अपनी भूमिका निभाएँ। तेरापंथ साहित्य में कहा गया है कि शिक्षक को विद्यार्थी के नैतिक निर्माण में योगदान देना चाहिए। वे स्वयं कल्याण के मार्ग पर अग्रसर हो और राष्ट्र को भी कल्यणकारी मार्ग की ओर अभिमुख करें । इसका भाव है कि विद्यार्थी में नागरिक गुणों का विकास करें। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में विद्यार्थी के बारे में कहा गया है कि प्रायः अच्छे विद्यार्थी की जिस धारणा को प्रोत्साहित किया जाता है उसमें अध्यापकों की अज्ञा पालन, नैतिक चरित्र और अध्यापक के शब्दों को अधिकारिक ज्ञान की तरह स्वीकारना शामिल है। हमें विद्यार्थी की सक्रियता व रचनात्मकता सामर्थ्य को पोषित और संवर्द्धित करना चाहिए।

बच्चे का समुदाय और उसका स्थानीय वातावरण अधिगम प्राप्ति के लिए प्राथमिक सन्दर्भ होता हे जिसमें वह अपना ज्ञान अर्जित करता हे। परिवेश के साथ अंतः–क्रिया करके ही बच्चा ज्ञान सृजित करता हे और जीवन में सार्थकता पाता है। जैसे–जैसे बच्चे बडे होते है, उनकी तार्किक क्षमता का विकास काफी हद तक होता है। फिर भी इतने परिपक्व नहीं हो पाते हैं कि मान्यताओं और मानकों पर प्रश्न खडा कर सकें, दूसरों को प्रभावित करने के लिए कानूनों को तोडते हैं इस चरण नियमों, प्रतिबन्धों, दायित्वों, शिष्टताओं की समीक्षा कर चिन्तन को बढावा देते हुए सामूहिक अच्छाई, त्याग, संयम के मूल्यों के प्रति अन्तर्दृष्टि विकसित की जा सकती है। तेरापंथ साहित्य में भी यही कहा गया है कि बच्चा जन्म लेता है तब से उसका शिक्षा क्रम प्रारम्भ हो जाता है। प्रथम पाठ्यशाला उसका अपना घर बनता है और प्रथम प्रशिक्षिका उसकी मां होती है । बोलना, चलना, उठना–बैठना आदि समस्त क्रियाएँ वह मां से सीखता है। इस प्रकार तेरापंथ साहित्य में भी बच्चे की अधिगम प्राप्ति का प्राथमिक सन्दर्भ उसके स्थानीय वातावरण को बताया गया है ।

तेरापंथ साहित्य में भी कहा गया है कि विद्यार्थी तोड–फोड मूलक ध्वसांत्मक प्रवृत्तियों में कभी न उलझे वे जीवन शुद्धि मूलक रचना में अपने आपकों जोडे अर्थात रचनात्मक कार्य करे तेरापंथ साहित्य में भी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 की तरह विद्यार्थी के लिए त्याग, दया, चरित्रवान, गुरु के आज्ञा पालन आदि नियमों की बात कही गई है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में पाठ्यचर्या का वर्तमान सरोकार बच्चों को सर्थक अनुभव देने वाली तथा समाहित करने वाली शिक्षा प्रदान करने का है। इसलिए यह जरुरी है कि सामाजिक सांसकृतिक संसार के अनुभवों को भी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाए। हमें एक ऐसी पाठ्चर्या की आवश्यकता है जिसमें सृजनात्मकता, नवप्रवर्तकता और बालक का सम्पूर्ण विकास हो राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में आध्यामिक शिक्षा को भी अच्छा माना है । तेरापंथ साहित्य में भी पाठ्यक्रम में आध्यात्मिक शिक्षा को जोडा गया है तथा सर्वांगीण विकास की बात पाठ्यक्रम में की गई है।

विद्यालय–राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में कहा गया है कि सार्वजनिक स्थल के रुप में स्कूल में समानता, सामाजिक विविधता और बहुलता के प्रति सम्मान का भाव होना चाहिए, साथ ही बच्चों के अधिकारों और उनकी गरिमा के प्रति सजगता का भाव होना चाहिए। इन मूल्यों को सजगतापूर्वक स्कूल के दृष्टिकोण होना चाहिए। इन मूल्यों को सजगतापूर्वक स्कूल के दृष्टिकोण का हिस्सा बनाया जाना चाहिए और उन्हें स्कूली व्यवहार की नींव बनना चाहिए। सीखने की क्षमता देने वाला वातावरण वह होता है जहां बच्चे सुरक्षित महसूस करते है, जहां भय का कोई स्थान नहीं होता है और स्कूली रिश्तों में बराबरी और जगह की समता होती है और कहा भी है कि स्कूल के भीतर व बाहर दोनों जगहों पर सीखने की प्रक्रिया चलती है। इन दोनों जगहों में सम्बन्ध रहे तो सीखने की प्रक्रिया पुष्ट होती है । कला और कार्य, समग्र सीखने का अवसर प्रदान करते हैं। जो सौन्दर्य बोध से पुष्ट होता है ऐसे अनुभव भाषायी रुप से ज्ञात चीजों के लिए महत्वपूर्ण है विशेषकर नैतिक मुद्दों में ताकि प्रत्यक्ष अनुभवों से सीखा जा सके और जीवन में समाहित किया जा सके। तेरापंथ साहित्य में कहा गया है विद्यालय में उच्च चारित्रिक गुणों का विकास किया जा सकता है। विद्यालय संस्कार युक्त शिक्षा देने वाले होने चाहिए।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 में कहा गया है कि अधिगम के व्यवस्थित अनुकरण के लिए और बच्चों की रुचियों एवं संभावनाओं के विकास के लिए उनमें आत्मानुशासन का मूल्य और आदत डालना महत्वपूर्ण होता है। अनुशासन ऐसा होना चाहिए जो काम के सम्पन्न होने में मद्द करें और जो बच्चों की सक्षमता को बढाए। अनुशासन शिक्षक और बच्चों दोनों के लिए आजादी का विकल्प एवं स्वायत्तता बढाने वाला होना चाहिए। इसी प्रकार तेरापंथ साहित्य में भी अनुशासन के इसी स्वरुप की बात कही गई है। इसे इस श्लोक के माध्यम से स्पष्ट किया गया है–

किं स्रोतः किं स्वरुपं च, किं फलं चानुशासनम् ।

स्वतन्त्रता भवेत् स्रोतः परस्वातन्ज्यरक्षिका ।।

इस श्लोक का भाव है कि अनुशासन का स्रोत स्वतन्त्रता है जो दूसरों की स्वतन्त्रता को सुरक्षित रख सके आचार्य महाप्रज्ञ एवं आचार्य तुलसी ने भी आत्मानुशासन को अनुशासन का उत्कृष्ट रुप माना है।

इस प्रकार हम देखते हे कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारुप 2005 व आधुनिक तेरापंथ साहित्य दोनों में शैक्षिक तत्वों में बहुत कुछ समानता देखने को मिलती है।

संदर्भः–

1. आचार्य महाप्रज्ञ (1997), "शिक्षा जगत के लिए जरूरी है" जैन विश्व भारती, लाडनू, नागौर, राज.।
2. साध्वी परमयशा (2006) "आचार्य महाप्रज्ञ का नैतिक दर्शन" जैन विश्व भारती, लाडनू, नागौर, राज.।
3. अचार्य तुलसी (1991), "प्रवचन पाथेय 11वां, जैन विश्व भारती, लाडनू, नागौर, राज.।
4. प्रज्ञा कुसुम (1994), "आचार्य तुलसी साहित्यः एक पर्यवेक्षक", जैन विश्व भारती, लाडनू, नागौर, राज.।
5. आचार्य महाप्रज्ञ (1995), "जीवन विज्ञान शिक्षा का नया आयाम", जैन विश्व भारती, लाडनू, नागौर, राज.।

*** Corresponding Author:**

डॉ. बीना देवी जैन, *असिस्टेन्ट प्रोफेसर*

सुबोध महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, सांगानेर जयपुर

ई.मेल–beena_sanjeev76@yahoo.co.in, मोबाइल नं- 9521604872